आदर्श प्रार्थना

मत्ती 6:9-15; लूका 11:1-4

आपको क्या जानना अच्छा लगता है। बच्चों के लाखों ऐसे सवाल होते हैं अर्थात कई ऐसी बातें हैं, जिनका आरम्भ "क्यों?" से होता है। युवाओं को इस बात की चिंता होती है कि वे जीविका चलाने के लिए क्या करेंगे। यदि उन्हें किसी से प्रेम है तो वे उसे कैसे बताएंगे। वयस्क जानना चाहते हैं कि जीवन में उन्नति कैसे करें।[1] परन्तु यीशु के चेले जानना चाहते थे कि *प्रार्थना कैसे करें:* "फिर वह किसी जगह प्रार्थना कर रहा था: और जब वह प्रार्थना कर चुका, तो उसके चेलों में से एक ने उस से कहा; हे प्रभु, जैसा यूहन्ना ने अपने चेलों को प्रार्थना करना सिखलाया वैसे ही हमें भी तू सिखा दे" (मत्ती 11:1)। मसीह द्वारा दिया गया उत्तर "प्रभु की प्रार्थना" के नाम से प्रसिद्ध है।

> जब तुम प्रार्थना करो, तो कहो; हे पिता, तेरा नाम पवित्र माना जाए, तेरा राज्य आए। हमारी दिन भर की रोटी हर दिन हमें दिया कर। और हमारे पापों को क्षमा कर, क्योंकि हम भी अपने हर एक अपराधी को क्षमा करते हैं, और हमें परीक्षा में न ला (लूका 11:2-4)।

इस प्रार्थना का सबसे प्रसिद्ध भाग मत्ती 6 में पाए जाने वाले पहाड़ी उपदेश में मिलता है:

> सो तुम इस रीति से प्रार्थना किया करो; "हे हमारे पिता, तू जो स्वर्ग में है, तेरा नाम पवित्र माना जाए। तेरा राज्य आए; तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है, वैसे ही पृथ्वी पर भी हो। हमारी दिन भर की रोटी आज हमें दे। और जिस प्रकार हमने अपने अपराधियों को क्षमा किया है, वैसे ही तू हमारे अपराधों को भी क्षमा कर। और हमें परीक्षा में न ला, परन्तु बुराई से बचा; क्योंकि राज्य, और पराक्रम और महिमा सदा तेरे ही हैं।" आमीन (मत्ती 6:9-13)।

बाइबल की ये आयतें सबसे प्रसिद्ध आयतों में से हैं। इससे प्रसिद्ध शायद भजन संहिता 23 है। अफ़सोस की बात है कि अधिकतर लोगों ने इस प्रार्थना को केवल याद ही किया है, परन्तु अपने जीवन में कभी नहीं उतारा। अगले कुछ मिनटों के लिए आइए देखते हैं कि यह प्रार्थना वास्तव में क्या शिक्षा देती है और इसमें हम सब के लिए कैसी चुनौती है।

हमें कुछ नकारात्मक बातों से आरम्भ करना चाहिए। पहले तो मत्ती 6:9-13 और लूका 11:1-4 की प्रार्थना का उद्देश्य परम्परागत प्रार्थना बनाना नहीं था। मत्ती 6:9-13 से पहली आयतों में, यीशु ने "बकबक" करने के विरुद्ध चेतावनी दी (मत्ती 6:7)। इसके

अलावा प्रभु ने कहा था कि ''तुम इस रीति से प्रार्थना किया करो'' (मत्ती 6:9क) अर्थात ''इस ढंग से'' (KJV) *न कि* ''इन्हीं शब्दों का इस्तेमाल करते हुए।'' बाद में प्रार्थना दोहराने के समय (लूका 11:1-4), तो यीशु ने भी उन्हीं शब्दों का इस्तेमाल नहीं किया: उसने मत्ती में 68 शब्दों का[2] और लूका में केवल 37 शब्दों का इस्तेमाल किया।[3]

दूसरा, इसका प्रसिद्ध शीर्षक ''प्रभु की प्रार्थना'' गलत है। प्रार्थना को यह नाम अंधकार काल के किसी अनाम विद्वान ने दिया और आज तक इसे इसी नाम से पुकारा जाता है। परन्तु यीशु ने यह प्रार्थना कभी की हो, ऐसा कोई रिकॉर्ड नहीं है।[4] मुझे उसके शब्दों पर ''*आदर्श* प्रार्थना'' के रूप में विचार करना अच्छा लगता है। यह कई प्रकार से एक आदर्श है। (1) उद्देश्य में आदर्श है: इसमें परमेश्वर की महानता को स्वीकारा गया है। इसमें राज्य के लिए और संसार के सब लोगों के लिए चिंता व्यक्त की गई है। इसमें व्यक्तिगत आवश्यकताओं की भी बात की गई है। (2) यह संक्षिप्तता तथा सादगी में भी आदर्श है। मत्ती की पुस्तक में यह पांच आयतों में और लूका में तीन आयतों में मिलती है। इसके लम्बे से लम्बे संस्करण को ज़ोर से पढ़ने पर केवल बीस सैकंड लगते हैं।[5] जैसा कि हम देखेंगे कि यह दूसरी तरह से भी आदर्श प्रार्थना है। अपने अध्ययन में, हम मुख्य वचनों के रूप में लम्बा होने (और इस कारण अधिक सम्पूर्ण) के कारण और अधिक प्रसिद्ध होने के कारण मत्ती 6 का इस्तेमाल करेंगे, परन्तु कभी-कभी मैं लूका 11 से भी बात करूंगा।

दिशा में आदर्श

यह प्रार्थना अपनी दिशा में एक आदर्श है। सबसे पहले तो यह *परमेश्वर* की ओर है: ''*हे हमारे पिता,* तू जो स्वर्ग में है'' (मत्ती 6:9ख)। हमें परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए न कि मरियम, या किसी संत से, बल्कि केवल परमेश्वर से। पौलुस कहता है कि हम ''सदा सब बातों के लिए हमारे प्रभु यीशु मसीह के नाम से परमेश्वर पिता का धन्यवाद करते'' रहें (इफिसियों 5:20)। फिर, हमें परमेश्वर, अपने *पिता* से प्रार्थना करनी चाहिए। यहोवा कोई अव्यैक्तिक परमेश्वर नहीं, बल्कि एक पिता है, जो सम्भाल करता और आवश्यकताओं को पूरा करता है। इसके अलावा, हमें परमेश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए जो *हमारा* पिता है। यह किसी वैरागी की प्रार्थना नहीं; और न ही यह किसी इकलौते बच्चे की प्रार्थना है। ''हमारे पिता'' वाक्यांश में हमारे सामान्य भाइचारे को स्वीकार किया जाता है। प्रार्थना में ''हमारे पिता'' कहकर हम यह संकेत देते हैं कि हम पारिवारिक मामलों पर बात करने के लिए इकट्ठे हुए हैं।

प्रार्थना दिशा में ही नमूना इसलिए है, क्योंकि यह *स्वर्ग की ओर* है: ''हे हमारे पिता, *तू जो स्वर्ग में हैं*'' (मत्ती 6:9ख)। यह संसार परमेश्वर की सृष्टि और उसकी सम्पत्ति है, पर यह उसका घर नहीं है। हमारा धर्म स्वर्ग पर केन्द्रित धर्म है। यीशु स्वर्ग से आया, और वह स्वर्ग में लौट गया। अब वह स्वर्ग में परमेश्वर के दाहिने हाथ हमारे लिए विनतियां करता है। एक दिन वह अपने लोगों को लेने के लिए स्वर्ग से आएगा, जो उसके साथ स्वर्ग में सदा के लिए रहेंगे। पौलुस ने लिखा है कि ''हमारा स्वदेश स्वर्ग पर है'' (फिलिप्पियों 3:20)। यीशु ने अपने चेलों से कहा कि ''इस से आनन्दित हो कि तुम्हारे नाम स्वर्ग पर

लिखे हैं'' (लूका 10:20)। वह हम में से हर एक को ''अपने लिए स्वर्ग में धन इकट्ठा'' करने की चुनौती देता है (मत्ती 6:20)।

अपनी पवित्रता में आदर्श

यह प्रार्थना अपनी पवित्रता में भी एक आदर्श है। परमेश्वर अविश्वसनीय मित्र नहीं है;[6] वह हमारा *पिता* है और उसका नाम *पवित्र* है। प्रार्थना आगे बढ़ती है, ''तेरा नाम पवित्र माना जाए'' (मत्ती 6:9ग; देखें लूका 11:2ख)। पुराने नियम में भजन लिखने वाले ने कहा था, ''उसका नाम पवित्र और भय योग्य है'' (भजन संहिता 111:9ख)। मूसा ने आज्ञा दी थी, ''तू अपने परमेश्वर का नाम व्यर्थ न लेना'' (निर्गमन 20:7क)। यीशु की आदर्श प्रार्थना से हमें पता चलता है कि नई वाचा में भी हमें परमेश्वर के पास भय की गहरी भावना से आना आवश्यक है।

बल देने में आदर्श

जिस पवित्रता की बात अभी की गई है, उससे प्रार्थना में अपनी याचनाओं को लाने के लिए माहौल बनता है। आरम्भिक चिंता अपने लिए नहीं, बल्कि परमेश्वर की योजनाओं तथा उद्देश्यों के लिए है: ''तेरा राज्य आए'' (मत्ती 6:10क; देखें लूका 11:2ग)।

वे किस ''राज्य'' की प्रतीक्षा कर रहे थे? यह *कलीसिया* थी: मैं मसीहा के राज्य पर कुछ प्रमुख आयतें बताता हूं:

- *दानिय्येल 2:44.* दानिय्येल ने प्रतिज्ञा की कि मसीहा का राज्य रोमी साम्राज्य के दिनों में आएगा।[7]
- *मत्ती 3:2; 4:17.* संसार पर रोमियों के शासन के दौरान, यूहन्ना बपतिस्मा देने वाला और फिर यीशु यह प्रचार करते हुए आए कि ''स्वर्ग का राज्य निकट आया है।''
- *मत्ती 16:18, 19.* कैसरिया फिलिप्पी में, यीशु ने अपने राज्य की स्थापना की बात की; इसे उसने अपनी ''कलीसिया'' कहा।
- *मरकुस 9:1.* मसीह ने अपने चेलों को बताया कि राज्य उनके जीवनकाल में ही आएगा और ''सामर्थ के साथ'' आएगा। बाद में उसने कहा कि सामर्थ पवित्र आत्मा के आने पर आएगी (प्रेरितों 1:6-8)।
- *प्रेरितों 2:1-4.* यीशु की मृत्यु, गाड़े जाने तथा जी उठने के बाद पहले पिन्तेकुस्त के दिन पवित्र आत्मा आया। उस समय सामर्थ आई और राज्य/कलीसिया स्थापित हुआ।
- *प्रेरितों 2:47.* तब से, राज्य/कलीसिया के अस्तित्व में होने की बात की जाती है। लोगों को बचाकर या उद्धार दिलाकर परमेश्वर उनको ''अंधकार के राज्य'' से निकालकर ''अपने प्रिय पुत्र के राज्य में'' लाकर (कुलुस्सियों 1:13) अपनी कलीसिया (KJV) में मिला देता था। मसीही लोग न हिलने वाले राज्य अर्थात (इब्रानियों 12:28) कलीसिया में हैं, जिसे अधोलोक के फाटक नष्ट नहीं कर

सकते (मत्ती 16:18)!

जब यीशु ने चेलों से "तेरा राज्य आए" प्रार्थना करने के लिए कहा, तो उन्होंने वास्तव में "तेरी कलीसिया स्थापित हो" प्रार्थना करनी थी। प्रभु अपने चेलों को परमेश्वर के उस बड़े अनन्त खाके में भागीदार होने के लिए कह रहा था, जिसमें कलीसिया भी थी (देखें इफिसियों 3:10, 11)।

क्या हमें आज प्रार्थना के इस भाग में से प्रार्थना करनी चाहिए? आज जबकि राज्य/कलीसिया स्थापित हो चुका है, तो हमारे लिए उन्हीं शब्दों का इस्तेमाल न करना बेहतर है। हम यह कह सकते हैं, "तेरा राज्य *सारे संसार में*" आए या "तेरा राज्य *सब लोगों के मनों में* आए।" यदि हम इन शब्दों का इस्तेमाल बिना समझे करते हैं, तो हम हज़ार वर्ष के राज्य की शिक्षा देने वालों पर यकीन कर रहे हैं, जो मानते हैं कि मसीह का राज्य अभी स्थापित नहीं हुआ।

बेशक हमें इन शब्दों में से कुछ को लेना चाहिए, पर यह प्रार्थना यह नहीं सिखाती कि मुझे और आपको राज्य/कलीसिया के आने की *चिंता* होनी चाहिए और यह कि हम अपनी प्रार्थनाओं में इसकी भलाई मांगें। हमें कलीसिया के लिए प्रार्थना करनी चाहिए, जो स्थानीय क्षेत्रों में इकट्ठी होती है; हमें संसार भर की कलीसिया की स्थापना करनी चाहिए। ऐसा करके हम "कलीसिया के द्वारा" परमेश्वर की "उस सनातन मंशा के अनुसार जो उसने हमारे प्रभु यीशु मसीह में की थी" उसकी बुद्धि को संसार में फैलाने के लिए उसकी योजना में भागीदार होते हैं (इफिसियों 3:10, 11)!

चिंता में एक आदर्श

अगली विनती में आत्मिकता पर फिर बल दिया गया है, पर अब ज़ोर कलीसिया/राज्य के पूरी पृथ्वी पर जाने से बदल जाता है: "तेरी इच्छा जैसे स्वर्ग में पूरी होती है, वैसे ही पृथ्वी पर भी हो" (मत्ती 6:10ख, ग)। यह इच्छा व्यक्त की जाती है कि पृथ्वी का हर व्यक्ति परमेश्वर की इच्छा को माने। ऐसी सम्भावना पर विचार करने से ही मन चकरा जाता है। विचार करें कि स्वर्ग में यह कैसे होता होगा। स्वर्गदूतों और महादूतों के परमेश्वर के सिंहासन के सामने खड़े होने की कल्पना करें। उन्हें उसकी आज्ञाओं को पूरा करने के लिए सुनने को तत्पर और आज्ञा मानने को तैयार देखें। वहां पर जहां इस प्रकार आज्ञा मानी गई यह कितना अद्‌भुत होगा कि परमेश्वर की इच्छा पूरी हो जाए, क्योंकि संसार के लोगों के ढंग अलग हैं!

इस भाग की प्रार्थना के उत्तर के लिए क्योंकि परमेश्वर की इच्छा उसके वचन में प्रकट की गई है, हमें पूरी सच्चाई के लिए वचन के पास जाना पड़ेगा (मत्ती 28:18-20; मरकुस 16:15, 16)। हमें हर जगह प्रभु की आज्ञा मानने के लिए लोगों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

परन्तु इस प्रार्थना के मुख्य भाग का महत्व यह है कि यह हमें उसकी इच्छा के प्रति अपने ही *व्यवहार* को जांचने के लिए विवश करती है। साफ कहें तो हम में से अधिकतर लोग अपने जीवनों के लिए परमेश्वर की इच्छा से प्रसन्न नहीं हैं, "लोगों को स्वर्ग के राजा

द्वारा उन्हें दिए गए भाग पसन्द नहीं हैं।'' कोई तो यह प्रार्थना कर रहा था कि ''*मेरी* इच्छा पृथ्वी पर पूरी हो।'' प्रार्थना का उद्देश्य परमेश्वर को अपनी इच्छा के आगे झुकाना नहीं, बल्कि अपने आप को उसकी इच्छा के सामने झुकाना सीखना है।

संयम में आदर्श

हम प्रार्थना के आधे भाग से आगे निकल आए हैं और अभी तक इसमें व्यक्तिगत विनती नहीं है, परन्तु हमारे मन अब इसके लिए तैयार होने चाहिए। आगे हम पढ़ते हैं, ''हमारे दिन भर की रोटी आज हमें दे'' (मत्ती 6:11)। लूका के विवरण में है, ''हमारी दिन भर की रोटी *हर दिन* हमें दिया कर'' (लूका 11:3)। इस प्रार्थना में संयम पर ध्यान दें: यह *केक* (या किसी विलासिता[8]) के लिए नहीं, बल्कि *रोटी* के लिए विनती है। यह *महीने भर की* रोटी के लिए नहीं, बल्कि प्रति *दिन* की रोटी के लिए है।

प्रार्थना के इस भाग में एक सबक यह है कि हम जीवन की *आवश्यकताओं* से संतुष्ट हों। खाना उन कुछ वस्तुओं में से है, जो हमें मिलनी *चाहिए*। अन्य आशिषों के लिए प्रार्थना करना गलत नहीं है, पर हमारी प्रसन्नता वस्तुओं को जमा करने पर निर्भर नहीं होनी चाहिए। पौलुस ने लिखा है, ''यदि हमारे पास खाने और पहिनने को हो, तो इन्हीं पर संतोष करना चाहिए'' (1 तीमुथियुस 6:8)।

प्रार्थना के इस भाग में और कई सबक हैं। उदाहरण के लिए, हमें याद दिलाया गया है कि *परमेश्वर* ही सब आशिषों को देने वाला है। हमें उससे प्रतिदिन की रोटी जैसी बिल्कुल सादी और बुनियादी चीज़ें मांगनी चाहिए। हमें यह नहीं कहना चाहिए कि ''देखो *मैंने* क्या किया है,'' बल्कि यह कहना चाहिए कि ''देखो मेरे लिए *परमेश्वर* ने क्या किया है।'' हमारे पास जो कुछ भी है, उसे हम ने रास्ते से ''उठाया है''; परन्तु जिसने उन आशिषों को ''उठाने के लिए'' वहां रखा, वह परमेश्वर ही है। हमें दैनिक रोटी के लिए काम करना चाहिए (देखें 2 थिस्सलुनीकियों 3:11, 12), परन्तु हमें यह भी समझ होनी आवश्यक है कि परमेश्वर ही हर आशीष का देने वाला है।

यीशु की प्रार्थना से नि:स्वार्थ होने की आवश्यकता का भी पता चलता है। हमें ''*अपनी* प्रतिदिन की रोटी'' के लिए नहीं, बल्कि ''*हमारी* प्रतिदिन की रोटी'' *के लिए* प्रार्थना करनी आवश्यक है। पूरी प्रार्थना में, मसीही लोगों के समाज पर बल दिया गया है। इस प्रार्थना को फिर से पढ़ें। इसमें व्यक्तिवाचक सर्वनाम ''मैं'' कहीं नहीं मिलता। प्रार्थना दूसरों के लिए चिंता से ओतप्रोत है।

दीनता में आदर्श

प्रार्थना में आगे और व्यक्तिगत विनती आती है: ''तू हमारे अपराधों को भी क्षमा कर'' (मत्ती 6:12ख)। यूनानी शब्द के अनुवाद ''अपराधों'' का संकेत आर्थिक देनदारियों के लिए नहीं, बल्कि आत्मिक कर्ज़ के लिए है। नये नियम में, एक वचन में यूनानी शब्द का इस्तेमाल अपराध, गलती या पाप के अर्थ में किया गया है।[9] लूका के वृत्तांत में है ''और

हमारे पापों को क्षमा कर'' (लूका 11:4क)।[10] पवित्र परमेश्वर के सामने खड़े होकर, हम मानते हैं कि हम पापी हैं और परमेश्वर से क्षमा करने का आग्रह करते हैं। यह हमारे घमण्डी मन को तोड़ता है।

इस विनती का अगला भाग हमारे घमण्ड पर और भी तीखा प्रहार करता है: ''जिस प्रकार हमने अपने अपराधियों को क्षमा किया है'' (मत्ती 6:12क)। क्षमा करना बहुत कठिन है! जब कोई हमें चोट पहुंचाता है, तो हमारा घमण्ड घायल होता है। हम यह सोचने पर मजबूर होते हैं, ''मैं उसे *कभी* क्षमा नहीं कर सकता!'' उस व्यक्ति को अपने मनों में क्षमा करना कितना कठिन है! हमें यह कहना सीखना आवश्यक है कि ''यह बहुत बड़ी बात नहीं है; मैं इसे छोड़ दूंगा।''

मत्ती 6:12 की यीशु की ठोस शिक्षा से पीछा छुड़ाने के प्रयास बहुत हुए हैं (देखें आयतें 14, 15)। कोई पूछता है, ''क्या मैं किसी ऐसे व्यक्ति को क्षमा कर सकता हूं, जिसने मन न फिराया हो और मुझ से क्षमा न मांगी हो?'' कोई लूका 17:3 को दिखाते हुए कहता है कि परमेश्वर हमें तब तक क्षमा नहीं करता, जब तक हम मन नहीं फिराते। हम यहां पर संगति की बहाली की बात नहीं कर रहे, हम तो अपने मनों के *व्यवहार* की बात कर रहे हैं। क्रूस पर यीशु ने प्रार्थना की थी, ''हे पिता, इन्हें क्षमा कर, क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं। '' (लूका 23:34क)। उसने यह प्रार्थना तो की, परन्तु उनके पाप का दोष तब तक बना रहा, जब तक उन्होंने मन नहीं फिराया (प्रेरितों 2:36-38)। तौ भी (और यह कारण है कि हमें ऐसा करना क्यों सीखना आवश्यक है), यीशु ने *अपने* मन में उन्हें तभी क्षमा कर दिया था। यदि कोई मुझे हानि पहुंचाता है, तो उस व्यक्ति के साथ मेरा सम्बन्ध तब तक तनावपूर्ण रहेगा, जब तक वह व्यक्ति अपनी गलती नहीं मानता; परन्तु मेरी चिंता अपने मन में यह होनी आवश्यक है कि मैं *अपने* मन में उसके प्रति कोई शत्रुता न रखूं। मुझे इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि ''कोई कड़वी जड़'' न फूट पड़े (इब्रानियों 12:15) जो मेरे मन में फैलकर उस प्रेम को, जो दूसरों के प्रति मेरे मन में होना चाहिए, बाहर निकाल दे।

प्रार्थना के इस भाग के लूका के वृत्तांत में यह सकारात्मक टिप्पणी है, ''क्योंकि हम भी अपने हर एक अपराधी को क्षमा करते हैं'' (लूका 11:4ख)। यदि हम क्षमा करने को तैयार न हों तो? कहा जाता है कि जो आदमी क्षमा करने को तैयार नहीं है, वह उसी पुल का नाश कर रहा है, जिस पर से उसे गुज़रना है। आदर्श प्रार्थना के तुरन्त बाद यीशु के विचार उत्पन्न करने वाले शब्दों पर ध्यान दें: ''इसलिए यदि तुम मनुष्य के अपराध क्षमा करोगे, तो तुम्हारा स्वर्गीय पिता भी तुम्हें क्षमा करेगा और यदि तुम मनुष्यों के अपराध क्षमा न करोगे, तो तुम्हारा पिता भी तुम्हारे अपराध क्षमा न करेगा'' (मत्ती 6:14, 15)।

सूक्ष्म दृष्टि में आदर्श

प्रार्थना जारी रहती है: ''और हमें परीक्षा में न ला,[11] परन्तु बुराई से बचा'' (मत्ती 6:13क; देखें लूका 11:4ग)। आदर्श प्रार्थना सूक्ष्म दृष्टि में आदर्श है, क्योंकि यह केवल पापों की क्षमा के साथ ही नहीं, बल्कि उससे भी दूर रहने का ध्यान रखती है, जो पाप की

ओर ले जाता है।

''बुराई'' शब्द के सम्बन्ध में यूनानी पवित्र शास्त्र में इससे पहले एक उपसर्ग है: ''*the* evil.'' इसका अर्थ ''बुरी [वस्तु]'' हो सकता है (अर्थात, कोई भी जो बुरी है) या ''बुरा'' (अर्थात, शैतान)।[12] क्योंकि दूसरा (बुरा) पहले (बुरी चीज़) के लिए ज़िम्मेदार है, इसलिए दोनों में एक ही मूल विचार हो सकता है।

प्रार्थना का यह भाग हमें परीक्षा से दूर रहने के लिए परमेश्वर की सहायता,[13] उस परीक्षा का सामना करने के लिए सहायता, जो हमारे रास्ते में आती है, और शैतान को हराने के लिए सहायता मांगना सिखाता है। यह हम पर ज़िम्मेदारी भी डालती है। बहुत बार, हम परीक्षा भरी परिस्थिति में अपनी आंखें खोलकर जाने के बाद चाहते हैं कि परमेश्वर हमें मुश्किल से निकाल दे। हम लगातार प्रार्थना करते हुए कि ''हमें परीक्षा में न डाल'' जानबूझकर और यह जानते हुए कि उन परिस्थितियों में नहीं जा सकते, जिनमें हम जानते हैं कि हम परीक्षा में पड़ेंगे।

महिमा में आदर्श

प्रसिद्ध ''प्रभु की प्रार्थना'' के अन्तिम शब्दों को अंग्रेज़ी के न्यू अमेरिकन स्टैंडर्ड बाइबल में कोष्ठकों में रखा गया है: ''[क्योंकि राज्य और पराक्रम और महिमा सदा तेरे हैं। आमीन]'' (मत्ती 6:13ख)। यह समापन आरम्भिक मूल लेखों में नहीं मिलता है। परन्तु इस बात का प्रमाण है कि ये शब्द आरम्भिक सदियों की कलीसिया में इस्तेमाल किए जाते थे और वे अधिकतर अनुवादों में कहीं न कहीं टिप्पणियों या नोट्स में मिल जाते हैं। वे प्रार्थना समाप्त करने का सही ढंग हैं। वे हर प्रकार की भलाई के देने वाले तथा स्वयं परमेश्वर की ओर वापस आ जाते हैं:

- ''राज्य'' उसी का है। राज्य उसी का है, और वह सब के ऊपर है। हमें उस सच्चाई को मानना पड़ेगा।
- ''सामर्थ'' उसी का है। मनुष्य के पास जो भी सामर्थ है, वह परमेश्वर की सामर्थ के सामने बहुत कम है। हमें इस तथ्य को भी मानना चाहिए।
- ''महिमा'' उसी की है, और हमें यह बताना चाहिए।
- ये सब बातें ''सदा तक'' रहेंगी। ''आमीन'' और आमीन!

सारांश

यही आदर्श प्रार्थना है। क्या यह आपको और मुझे *वह सब कुछ* सिखाती है, जो प्रार्थना के बारे में जानना आवश्यक है? नहीं। उदाहरण के लिए, यह यीशु के नाम में नहीं है। आदर्श प्रार्थना तब कही गई थी, जब मूसा की व्यवस्था प्रभावी थी और आज किसी भी विवेकी यहूदी द्वारा की जा सकती है। पौलुस ने सिखाया था, नये नियम में, हमें ''सदा सब बातों के लिए हमारे प्रभु *यीशु मसीह के नाम से*[13] परमेश्वर पिता का धन्यवाद करते'' रहना चाहिए (इफिसियों 5:20; कुलुस्सियों 3:17 भी देखें)। फिर, आदर्श प्रार्थना की विनतियां सामान्य प्रकृति ही हैं। जब आप और मैं प्रार्थना करते हैं, तो हमें स्पष्ट बातें कहनी चाहिए: हमें

विशेष आशिषों के लिए धन्यवाद करना चाहिए; हमें विशेष पापों का अंगीकार करना चाहिए; हमें विशेष लोगों के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

तौ भी बहुत कुछ है, जो इस आदर्श प्रार्थना से सीखा जा सकता है। जैसा कि कहा गया है कि यह, पवित्रता, बल, चिंता, संयम, दीनता, सूक्ष्मदृष्टि और महिमा में एक आदर्श है।

अन्त में, मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि इस प्रार्थना का आरम्भ, "*हे हमारे पिता,* तू जो स्वर्ग में है" (मत्ती 6:9ख) से होता है। आप सचमुच में तब तक यह प्रार्थना नहीं कर सकते, जब तक परमेश्वर आपका पिता नहीं है। *क्या* वह आपका पिता है? *क्या* आप उसकी संतान हैं। क्या आपने विश्वास तथा आज्ञापालन के द्वारा उसके परिवार में जन्म ले लिया है? पौलुस ने लिखा है, "क्योंकि तुम सब उस *विश्वास करने के द्वारा* जो मसीह यीशु पर है, परमेश्वर की सन्तान हो और तुम में से जितनों ने *मसीह में* बपतिस्मा लिया है, उन्होंने मसीह को पहिन लिया है" (गलातियों 3:26, 27)। यदि आपने पश्चात्तापी विश्वासी के रूप में बपतिस्मा लिया है, तो क्या परमेश्वर की सन्तान के रूप में *व्यवहार* किया है या आपने अपने परिवार, कलीसिया के नाम को धब्बा लगाया है (1 तीमुथियुस 3:15)? यदि आपको बपतिस्मा लेने या घर वापस आने की आवश्यकता है (देखें गलातियों 6:1; प्रेरितों 8:22; याकूब 5:16), तो मेरी प्रार्थना है कि आप आज ही आ जाएं।

टिप्पणियां

[1]बच्चों, नवयुवकों तथा वयस्कों के तीन वर्गों के सम्बन्ध में मैंने सामान्य होने की कोशिश की है। इस पर प्रचार करते हुए, जहां आप रहते हैं, वहां अलग-अलग आयु वर्ग के लोगों द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्न जोड़ लें। [2]अर्थात, मत्ती के वृत्तांत के NASB अनुवाद में, आयत 13 के अंतिम शब्दों सहित, 68 शब्दों का इस्तेमाल किया गया है। KJV में मत्ती के वृत्तांत में 66 शब्द इस्तेमाल किए गए हैं। यूनानी शास्त्र में, जिसमें मत्ती 6:13 का अंतिम भाग शामिल नहीं है, 57 शब्द इस्तेमाल किए गए हैं। [3]यह गणना NASB के आधार पर है। KJV में लूका के संस्करण में 58 शब्द हैं। यूनानी शास्त्र में लूका के वृत्तांत में 38 शब्द हैं। [4]कहा जाता है कि "प्रभु की प्रार्थना" वास्तव में यूहन्ना 17 में है। [5]अकेले में लम्बी-लम्बी प्रार्थनाएं करने में कोई बुराई नहीं है। यीशु अक्सर पूरी रात प्रार्थना करता था। परन्तु याद रखें कि सार्वजनिक प्रार्थनाएं (सार्वजनिक प्रवचनों की तरह) प्रभावकारी होने के लिए लम्बी नहीं होनी चाहिए। [6]बचपन में हमने कहा होगा, "वह केवल आपका दोस्त ही नहीं है।" आपके यहां भी ऐसे ही शब्द अवश्य होंगे। [7]दानिय्येल ने भविष्यवाणी की कि राज्य चौथे राज्य के दिनों में स्थापित होगा, जो कि इतिहास से पता चलता है कि रोमी साम्राज्य था। [8]जहां आप रहते हैं, वहां की जा सकने वाली विनतियों को दर्शाने के लिए इस वाक्य को बदल लें। [9]*ग्रीक लैक्सिकन,* 296. इस प्रार्थना के एक संस्करण में जिसका इस्तेमाल बहुत से लोगों द्वारा किया जाता है "अपराध" शब्द है (जिसका अर्थ "पाप" हो सकता है): "हमारे अपराधों को क्षमा कर, जैसे हम अपने अपराध करने वालों को क्षमा करते हैं।" [10]लूका ने "पापों" और "अपराधों" शब्दों का एक-दूसरे के स्थान पर इस्तेमाल किया है।

[11]यूनानी शब्द के अनुवाद "परीक्षा" के कई अर्थ हो सकते हैं, परन्तु इस आयत में इसका इस्तेमाल "बुराई" के स्थान पर किया गया है। इस संदर्भ में, यह "बुराई करने की परीक्षा" के लिए है। [12]NKJV का अनुवाद "दुष्ट है।" [13]क्योंकि परमेश्वर किसी को परीक्षा में नहीं डालता (याकूब 1:13), "हमें परीक्षा में न ला" वाक्यांश का अर्थ कुछ "हमें परीक्षा में पड़ने से बचने में सहायता कर" होना चाहिए। [14]प्रसिद्ध वाक्यांश

''यीशु के नाम में'' का अर्थ केवल कुछ कहना नहीं है; यह इस बात को समझने की हमारी स्वीकृति है कि यीशु अब हमारा मध्यस्थ है (1 तीमुथियुस 2:5)।